पुस्तक समीक्षा

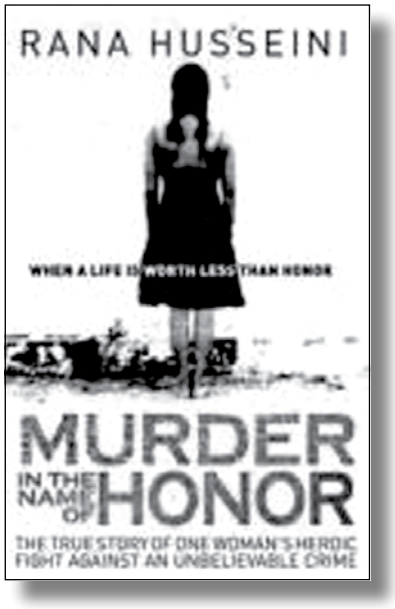

मर्डर इन द नेम ऑफ़ ऑनर

लेखक **राना हुसैनी**
भाषा **अंग्रेज़ी**
प्रकाशक **वन वर्ल्ड पब्लिकेशन्स**
वर्ष **2009**

अम्मान का कत्ल

"गर्मियों में जॉर्डन का तापमान तीस डिग्री के ऊपर चला जाता है। राजधानी की उमस से तंग आकर अम्मान के वे नागरिक जो सड़कों पर रोजी की तलाश में भटकने को मजबूर नहीं थे कॉफ़ी की दुकानें में छिपे बैठे थे।

यह 31 मई 1994 का दिन था, वो दिन जब किफ़ाया की अम्मी, चाचाओं व भाइयों ने तय किया था कि उसे मरना ही होगा।

पुराने शहर के एक हिस्से में था उसका पुश्तैनी मकान। किफ़ाया कुर्सी से बंधी बैठी थी- रसोई के कोने में मिठाई का डिब्बा अनछुआ पड़ा था। थोड़ी देर पहले उसका बड़ा भाई खालिद उसे समझाने आया था कि सब कुछ ठीक-ठाक था।

क़िफाया का गुनाह था कि उसने अपने बड़े भाई मुहम्मद को खुद के साथ बलात्कार करने दिया था। परिवार ने जबरन उसका निकाह चौंतीस साल के आदमी से करवाने से पहले उसका गर्भपात करा दिया था। छः महीने बाद क़िफाया ने तंग आकर तलाक़ ले लिया था।

उसने अपने परिवार को बेइ़ज़्ज़त किया था। अब एक ही रास्ता था।

खालिद ने क़िफाया के होठों के पास एक गिलास बढ़ाया और उसे पानी पीने को कहा। फिर कुरान की आयतें पढ़ने की हिदायत देकर चाकू उठाया। क़िफाया ने रहम की भीख मांगी। बाहर पड़ोसी सुनते रहे पर किसी ने कुछ नहीं किया- वह चीखती रही।

उन्होंने किफ़ाया की चीखें सुनी थीं और रहम की भीख भी। उन्होंने उसके भाई खालिद को घर के बाहर हाथ में खून से लथपथ चाकू लिए चिल्लाते सुना था, "मैंने अपने परिवार का कलंक मिटा दिया।" उसके परिवारवाले उसे बधाई देने का इंतज़ार कर रहे थे।

इसके बाद खालिद ने पास के पुलिस थाने में जाकर आत्म-समर्पण कर दिया। उसने बयान दिया कि परिवार के सम्मान की रक्षा के लिए उसने किफ़ाया का कत्ल किया है।"

पुस्तक के कुछ अंश

अपनी इस पुस्तक में राना हुसैनी के संस्मरण दर्ज हैं, कैसे उन्होंने 1990 के शुरूआती दशक में जॉर्डन में होने वाली 'सम्मान जनित हत्याओं' के चारों ओर बिखरी ख़ामोशी के लिए सतत प्रयास किए।

राना हुसैनी 'जॉर्डन टाइम्स' अखबार में जांच-पड़ताल रिपोर्टर हैं। उन्हें कई सम्मानों से नवाज़ा जा चुका है जिसमें 2000 का *मानव अधिकार निगरानी सम्मान* भी शामिल है।

यह पुस्तक राना हुसैनी की सम्मान के नाम पर की जाने वाली हत्याओं पर गहरी समझ, हत्याओं की सच्चाई तथा कानूनी ढांचे की खामियां जो इन अपराधों को न सिर्फ़ होने देती हैं बल्कि इन्हें वैधता भी प्रदान करती हैं का बेबाक चित्रण पेश करती है। पुस्तक का केंद्र जॉर्डन है परन्तु इसे दूसरे देशों व यूरोप, उत्तरी अमेरीका तथा इटली के समुदायों तक विस्तारित किया गया है। यह विस्तृत परिवेश पाठकों को यह समझने में मदद करता है कि सम्मान जनित हत्याओं को धार्मिक वैधता नहीं मिलती। इसके अलावा पाठक यह भी अनुमान लगा पाते हैं कि 'सांस्कृतिक सापेक्षवाद' के मानक जिनकी आड़ लेकर पश्चिमी समाज सम्मान जनित हत्याओं को जायज़ ठहराने का प्रयास करता है की कोई खास अहमियत नहीं है।

सच्चाई तो यह है कि किफ़ाया, दुआ, अलाक, फादिमे, ब्रूना और टीना की आत्म-कथाओं के ज़रिए लेखिका ने यह समझाने का प्रयास किया है कि इन सभी मामलों में एक साझी कड़ी है। यह साझापन जॉर्डन, ईराक, टर्की, स्वीडिन, इटली, संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य सभी देशों में मौजूद समाज की आक्रामकता दर्शाता है जिसके चलते समाज यह तय करता है कि कब-किस व्यक्ति को मौत के घटा उतारा जाना महत्वपूर्ण बन जाता है। परिवार की इज़्ज़त पूरे समुदाय का मान होती है और जब यह खौफ़नाक आदर्श लोगों के दिलो-दिमाग पर हावी हो जाता है तब उन्हें अपने-पराये में फ़र्क़ नहीं दिखता।

अलग-अलग जीवनियों के माध्यम से राना हुसैनी ने इस विषय से अपने जुड़ाव को भी पाठक के साथ बांटा है। भारतीय अखबारों में रोज़ छपने वाली 'रसोई की दुर्घटनाओं' की तरह सम्मान जनित हत्याएं अरबी अखबारों का एक साधारण विषय हैं जिसकी जड़ों तक पहुंचने के लिए उसे लम्बा सफ़र तय करना पड़ा।

जैसे-जैसे वह हर कत्ल की तह तक पहुंचती गई वैसे-वैसे इन औरतों की आवाज़ बनने और सम्मान से जुड़ी हत्याओं के मुद्दे को राष्ट्रीय स्तर पर उठाने की राना हुसैनी की दृढ़ता मज़बूत होती गई। उनकी रिपोर्टिंग को जनता का सहयोग मिला और साथ ही विरोधियों की धमकियां भी।

इस विषय पर अंतर्राष्ट्रीय तवज्जो होने के कारण इस पर एक राष्ट्रीय बहस शुरू हुई जिसने धीरे-धीरे एक नागरिक आंदोलन का रूप ले लिया। इस संघर्ष का एक महत्वपूर्ण पहलू था इसमें आर्थिक व शैक्षिक हाशिएदार वर्ग की सहभागिता जिसने इसे एक ज़मीनी जुड़ाव प्रदान करने में मदद की।

हुसैनी के अपने शब्दों में, 'हमने हर संभव तरीके अपनाये और ज़्यादा से ज़्यादा दस्तखत इकट्ठे किए- इंटरनेट, फैक्स, विज्ञापन, टीवी, रेडियो सभी इस्तेमाल किए। प्रक्रिया बड़ी रोचक थी। हम हर जगह अपने साथ विज्ञप्ति ले जाने लगे- होटल में खाना खाते लोग, बैरों, मैनेजरों, खानसामा, कूड़े वाले, सफाई वाले सभी ने खुशी से दस्तखत कर दिए। छः महीने के अंदर अभियानकर्त्ताओं ने 15300 दस्तखत इकट्ठे कर लिए थे।'

हुसैनी की यह किताब सशक्त, भावपूर्ण, उत्तेजक और सकारात्मक है। *मर्डर इन द नेम ऑफ़ ऑनर* एक दिलचस्प पठन सामग्री हैं खासकर उन लोगों के लिए जिनके पास इस मुद्दे की कोई पृष्ठभूमि नहीं है। पुस्तक चुनौतीपूर्ण है क्योंकि ये इन अपराधों के अंधकारमय पहलू को उजागर करती है और कानून के साथ-साथ मानसिकता में बदलाव की भी मांग करती है। पुस्तक का महत्व इस बात में निहित है कि इतने गंभीर और विवादपूर्ण विषय से जूझते हुए भी इसमें नीरसता और निराशा दिखाई नहीं पड़ती बल्कि एक मानवीय समाज की स्थापना के लिए राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में सुधार तथा आम जनता के जागरुक सहयोग की उम्मीद जगमगाती है।

जुही जैन

नारीवादी कार्यकर्त्ता, लेखिका व हम सबला की सम्पादक हैं।